© 2017 IJSRST | Volume 3 | Issue 7 | Print ISSN: 2395-6011 | Online ISSN: 2395-602X
Themed Section: Science and Technology

वाल्मीकि रामायण में गंगा : एक नारी

सौम्या कृष्ण
शोधच्छात्रा
संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

भारतीय संस्कृति में गंगा मात्र एक नदी नहीं है वरन् वह समस्त उत्तर भारत की जीवन धारा है। गंगा की ही विशाल जलराशि में भारत की आस्था, परम्परा एवं सभ्यताओं का उन्नयन हुआ है। यदि यह कहा जाय कि भारत में आजीविका, कृषि, वन, वन्यजीव, पशु, परम्परायें, रीतिरिवाज, सांस्कृतिक विरासत और पहचान, लोक जीवन, संस्कार, हर्ष, विषाद एवं मृत्यु प्रभृति जीवन के समग्र ताने–बाने का केन्द्र गंगा है तो कदापि अतिशयोक्ति न होगी। केवल इतना ही नहीं, वरन् विश्व पटल पर भी गंगा भारत की निर्मलता, पवित्रता एवं अखण्डता की परिचायक है। आदिकाल से ही गंगा के विषय में बहुत कुछ कहा, सुना और लिखा जाता रहा है। वैदिक ऋचाओं में गंगा की श्रेष्ठता का उल्लेख किया गया है।[1] किन्तु पौराणिक कथानकों में गंगा मात्र एक जलस्त्रोत नहीं है वरन् वहाँ वह एक मोक्ष प्रदायिनी, पापनाशिनी एवं अन्य दैवीय शक्तियों से सम्पन्न स्त्री के रूप में परिलक्षित होती है। शरणागतवत्सल एवं उच्च मानवीय गुणों से आबद्ध आदिकवि महर्षि वाल्मीकि ने भी गंगा के इसी पक्ष को और भी काव्यात्मक एवं रागात्मक रूप में उद्घाटित करने का प्रयास किया है। वस्तुतः जड़ पर चेतन का आरोप कवि के काव्य का प्रधान वैशिष्ट्य रहा है परन्तु किसी भी वस्तु का मानवीकरण काव्य सृष्टि एवं कवि प्रतिभा पर निर्भर करता है। प्रकृति के रम्य क्रोड में निवास करने वाले महर्षि वाल्मीकि इस कला में अत्यन्त दक्ष है। आचार्य बलदेव उपाध्याय का कथन है कि आदिकवि की वाणी पुण्यसलिला भागीरथी है, जिसमें अवगाहन कर पाठक तथा कवि अपने आपको पवित्र ही नहीं जानते, प्रत्युत रसमयी काव्यशैली के हृदयावर्जक स्वरूप को समझने में भी कृतकार्य होते हैं।[2] वस्तुतः वन में रहते हुए महर्षि वाल्मीकि ने प्रकृति एवं मानवीय भावनाओं का अत्यन्त सूक्ष्म निरीक्षण कर इस प्रकार चित्रित किया है मानो वह स्थावर प्राकृतिक सम्पदा न हो वरन्, कोई मानवी भावनाओं से ओत–प्रोत जीवित प्राणी हो। इसी क्रम में आदिकवि ने गंगा को एक दैवीय मानुषी के रूप में व्याख्यायित किया है। मानवी बनते ही गंगा लौकिक व पारलौकिक विषयों से आबद्ध एक संसारी जीव की भांति आचरण करती है। महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को माता,

पत्नी, पुत्री, भगिनी, प्रेयसी एवं भामिनी के स्त्रियोचित गुणों से संपृक्त एक दिव्य स्त्री के रूप में प्रदर्शित किया है।

महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को पर्वतराज हिमालय एवं मेना की ज्येष्ठ पुत्री कहा है[3] जिन्हें देवताओं ने देवकार्य सिद्धि हेतु हिमालय से मांगा तथा हिमवान् ने त्रिभुवन का हित करने की इच्छा से स्वच्छन्द पथ पर विचरने वाली अपनी लोकपावनी पुत्री गंगा को धर्मपूर्वक उन्हें दे दिया था।[4] इसके अतिरिक्त गंगा को भगीरथ एवं जह्नु की पुत्री भी कहा गया है। भगीरथ ने त्रिपथगामिनी को पुनः पृथ्वी पर लाने जैसा दुस्सह कार्य सम्पन्न किया था। अतः ब्रह्म ने भगीरथ से प्रसन्न होकर कहा कि यह गंगा तुम्हारी भी ज्येष्ठ पुत्री होकर रहेगी और भागीरथी नाम से जगत् में विख्यात होगी–

इयं च दुहिता ज्येष्ठा तव गंगा भविष्यति।

त्वत्कृतेन च नाम्राथ लोके स्थास्यति विश्रुता।।[5]

इतना ही नहीं, वरन् गंगा भी पुत्रीवत् भगीरथ के रथ का अनुकरण करती हुई पृथ्वी पर अवतरित होती है–

भगीरथो हि राजर्षिर्दिव्यं स्पन्दनमास्थितः।

प्रायादग्रे महाराजस्तं गंगा पृष्ठतोऽन्वगात्।[6]

इसी प्रकार गंगावतरण बेला में जब गंगा के विध्वंस से कुपित होकर जह्नु ने समस्त गंगाजल को पी लिया तब देवताओं, गन्धर्व एवं ऋषियों द्वारा स्तुति करने पर जह्नु ऋषि ने पुनः गंगा को अपने कानों के छिद्रों से प्रवाहित किया। इस प्रकार देव–गन्धर्वों ने जह्नु को गंगा का पिता कहा तथा गंगा को जाह्न्वी नाम दिया–

गंगा चापि नयन्ति स्म दुहितृत्वे महात्मनः।।

× × × × ×

तस्माज्जह्नुसुता गंगा प्रोच्यते जाह्नवीति च।।[7]

जह्नु कथा के माध्यम से गंगा का एक और चरित्र भी उद्घाटित होता है। युवावस्था के कारण गंगा अत्यन्त चंचल बाला की तरह अटखेलियाँ करती प्रतीत होती हैं। पृथ्वी पर उतरती हुई गंगा कहीं तेज, कहीं टेढ़ी और कहीं चौड़ी होकर बहती थी। कहीं बिल्कुल नीचे की ओर गिरती और कहीं ऊँचे की ओर उठी हुई थी। कहीं समतल भूमि पर वह धीरे–धीरे बहती थी और कहीं–कहीं अपने ही जल से उसके जल में बारम्बार टक्करें

लगाती रहती थी। कभी जल बार–बार ऊँचे मार्ग पर उठता और पुनः नीची भूमि पर गिरता था।[8] संभवतः अपनी इसी चंचलता के कारण गंगा अपने प्रवाह में जह्नु के यज्ञ–मण्डप को बहा ले गयी थी जिसे जह्नु गंगाजी का गर्व समझकर कुपित हो गये थे।[9] इसी प्रकार पृथ्वी पर अवतरित होते हुए गंगा जल भगवान् शंकर के मस्तक पर गिरी तब उन्होंने अपना आकार अत्यन्त बड़ा कर लिया और तीव्र वेग से गिरते हुए सोचा कि मैं अपने प्रखर प्रवाह के साथ शंकर जी को लिए–दिये पाताल में घुस जाऊँगी।[10] जिसे भगवान् ने उनका अहंकार समझा किन्तु रामायण शिरोमणी टीका में कहा गया कि यहां गंगा का शिव के प्रति अतिशय प्रेम एवं क्रीड़ा की इच्छा सूचित होती है– एतेन गंगायाः शिवे प्रीत्यातिशयः खेलनेच्छा च सूचिता।[11] अतः यहाँ गंगा एक प्रेयसी की भांति आचरण करती हैं और भगवान् शंकर उनके इस लेपन (खेलने की इच्छा)[12] को जानकर कुपित हो उठते हें और गंगा को अदृश्य कर देने का विचार करते हैं। वंशीधर व शिव सहाय का मानना है कि शिव का गंगा को अदृश्य करना उनकी खेलनेच्छा को सूचित करता है (भगवान् अतिसामर्थ्यविशिष्टस्त्रिनयनो हरः तिरोभावयितुं स्वशिरसि गंगा गोपियितुं बुद्धिं निश्चयं चक्रे एतेन शिवस्यापि खेलनेच्छा सूचिता।)[13]

महर्षि वाल्मीकि ने गंगा को समुद्र की पत्नी के रूप में चित्रित करने का प्रयास भी किया है–

भार्या चोयधिराजस्य लोकेऽस्मिन् सम्प्रदृश्यसे।[14]

वनवास हेतु प्रस्थान करती मर्यादापुरुषोत्तम राम की पत्नी सीता गंगा को समुद्र की पत्नी के रूप में सम्बोधित करते हुए कहती हैं– हे देवि! इस लोक में आप समुद्रराज की पत्नी के रूप में दिखाई देती हो। हे निष्पाप गंगे! ये महाबाहु पापरहित मेरे पतिदेव मेरे तथा अपने भाई के साथ वनवास से लौटकर पुनः अयोध्या नगरी में प्रवेश करें।[15] पुरुषसिंह श्रीराम जब पुनः वन से सकुशल लौटकर अपना राज्य प्राप्त कर लेंगे, तब मैं पुनः मस्तक झुकाकर आपकी स्तुति करूँगी।[16] यहाँ एक विवाहिता स्त्री दूसरी स्त्री से अपने सौभाग्य की आकांक्षा कर रही है।

शिव पुत्र कार्तिकेय के जन्म हेतु गंगा ने कार्तिकेय को अपने अपने गर्भ में धारण किया था, अतः गंगा एक जननी के रूप में भी प्रकाशित होती है–

देवतानां प्रतिज्ञाय गंगामभ्येव्य पावकः।
गर्भं धारय वै देवि देवतानामिदं प्रियम्।।
इत्येतद् वचनं श्रुत्वा दिव्यं रूपमधारयत्।
स तस्या महिमां दृष्टवा समन्तादवशीर्यत।।
समन्ततस्तदा देवीमभ्याषिंचत पावकः।

सर्वस्त्रोतांसि पूर्णानि गंगाया रघुनन्दन।।[17]

वस्तुतः गंगा ने कार्तिकेय को इस लिए धारण किया था क्योंकि वर्षों विहार के बाद भी महादेव व उमा के गर्भ में कोई पुत्र नहीं हुआ था।[18] रूद्र का तेज कोई भी धारण करने में समर्थ नहीं था। अतः देवताओं ने भगवान शंकर से उनके तेज को तेजस्वरूप अपने आप में ही धारण करने को कहा।[19] किन्तु उस तेज से समस्त पृथ्वी व्याप्त हो गयी, तब अग्नि ने उस बीजरूप को धारण किया किन्तु अग्निदेव के इस कृत्य से उमादेवी ने क्रुद्ध होकर सभी देवताओं को निःसन्तान होने का शाप दे दिया। तदोपरान्त कार्तिकेय के जन्म हेतु ब्रह्म जी ने उपाय बताया कि उमा की बड़ी बहिन है आकाशगंगा, जिनके गर्भ में शंकर जी के उस तेज को स्थापित करके अग्निदेव एक ऐसे पुत्र को जन्म देंगे, जो देवताओं के शत्रुओं का दमन करने में समर्थ सेनापति होगा।[20] यहाँ गंगा एक आदर्श बहन के रूप में भी दृष्टिगत होती हैं। ब्रह्म जी कहते हैं कि ये गंगा गिरिराज की ज्येष्ठ पुत्री है अतः अपनी छोटी बहन के उस पुत्र को अपने ही पुत्र के समान मानेंगी–

ज्येष्ठ शैलेन्द्रदुहिता मानयिष्यति तं सुतम्।

उमायास्तद्वहुमतं भविष्यति न संशयः।।[21]

सृष्टि के विकास में भी गंगा सहयोग करती हुई परिलक्षित होती है। गंगावतरण के समय गंगा अपने जल के साथ–साथ मत्स्य, कच्छप और शिशुमार प्रभृति जलीय जीवों को लिए हुए उतरती है–

असर्पत जलं तत्र तीव्रशब्द पुरस्कृतम्।

मत्स्यकच्छपसङ्.घैश्च शिशुमारगणैस्तथा।।[22]

आदिकवि ने गंगा के इस माननीय रूप में भी उसका दैवत्त्व अक्षुण्य रखा है। इस रूप में भी वह सर्वपापप्रणाशिनी, लोकपावनी, स्वर्गप्रदायिनी एवं कल्याणस्वरूपा है। वस्तुतः पृथ्वी पर गंगावतरण सगर पुत्रों के उद्धार हेतु ही हुआ था। गंगा के पावन जल से आप्लावित सगर पुत्रों की भस्मराशि निष्कलंकित हो गयी तथा वे सभी स्वर्ग को प्राप्त हुए।[23] इसके अतिरिक्त जो शापभ्रष्ट होकर आकाश से पृथ्वी पर आ गये थे, वे भी गंगा के जल में स्नान करके निष्पाप हो गये तथा उस जल से धुल जाने के कारण पुनः शुभ पुण्य से संपृक्त हो आकाश में पहुँचकर अपने लोकों को पा गये। उस प्रकाशमान जल के सम्पर्क से आनंदित हुए सम्पूर्ण जगत् को बड़ी प्रसन्नता हुई सब लोग गंगा में स्नान करके पापहीन हो गये।[24] सम्भवतः महर्षि ने गंगा के इस उपाख्यान के माध्यम से नारी के कल्याणकारिणी स्वरूप को व्याख्यायित करने का प्रयास किया है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि महर्षि वाल्मीकि के मानवीय कमण्डलु से गंगा की निर्मल धारा प्रवाहित होती हुई कभी हिमराज की पुत्री के रूप हिमालय का गौरव बढ़ाती है, तो कभी सागर की पत्नी के रूप में तीनों लोकों को अनान्दित करती है तो कभी कार्तिकेय की माता के रूप में देवताओं के ईप्सित कार्य को सिद्ध करती हुई उमा के प्रति अपने भगिनी धर्म का निर्वाह करती है। गंगा का सबसे मनोहारी रूप तो भगवान् शिव की प्रेयसी के रूप में उद्घाटित होता है। इसके अतिरिक्त अपनी पतितपावनी छवि का लोकार्पण गंगा ने सागर पुत्रों का उद्धार करके किया जो लोकश्रुत है। आज भी गंगा माँ के रूप में अपने जल से हम सभी का पुत्रवत् भरण पोषण कर रही हैं तथा कल्मषों का नाश कर रही हैं। किन्तु वर्तमान परिस्थितियों का अवलोकन करने पर यह आवश्यकता महसूस होती है कि हम सभी को गंगा के प्रति न केवल अपनी धार्मिक अपितु मानवीय भावनाओं को जागृत करते हुए उसकी पवित्रता एवं गौरव को अक्षुण्य बनाये रखने में अपना सहयोग देना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ–

1 'ऊं कक्षोन गंगाय, ऋग्वेद 6.45.31
2 संस्कृत साहित्य का इतिहास, आचार्य बलदेव उपाध्याय, पृ0 22
3 वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड 35.16
4 वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड 35. 17–18
5 वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड 44.5
6 वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड 43.30–31, 33–34
7 वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड 1.43.37–38
8 बाल्मीकि रामायण 1.43.23–25
9 बाल्मीकि रामायण 1.43.35
10 बाल्मीकि रामायण 1.43 4–6
11 बाल्मीकि रामायण 1.43.5
12 तस्याः गंगायाः लेपनं खेलनेच्छावृद्धिज्ञात्वा, रामायण शिरोमणि टीका 1.43.6
13 रामायण शिरोमणि टीका 1.43.6
14 वाल्मीकि रामायण 2.52.86
15 वाल्मीकि रामायण, अयोध्या काण्ड, 52.91
16 वाल्मीकि रामायण, 2.52.87
17 वाल्मीकि रामायण, 1.37.12–14
18 वाल्मीकि रामायण 1.36.7
19 वाल्मीकि रामाया 1.36.10–11
20 वाल्मीकि रामायण, 1.37.8
21 वाल्मीकि रामायण, 1.43.16
22 वाल्मीकि रामायण 1.43.16
23 वाल्मीकि रामायण, 1.43.41
24 वाल्मीकि रामायण, 1.43.27–30